ओ३म्

**‘महर्षि दयानन्द सरस्वती, स्वामी श्रद्धानन्द और गुरूकुल प्रणाली’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महर्षि दयानन्द सरस्वती (1825-1883) आर्य समाज के संस्थापक हैं। आर्य समाज की स्थापना 10 अप्रैल, 1875 को मुम्बई के काकडवाड़ी स्थान पर हुई थी। इसी स्थान पर संसार का सबसे पुराना आर्य समाज आज भी स्थित है। आर्य समाज की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य वेदों का प्रचार व प्रसार था तथा साथ ही वेद पर आधारित धार्मिक तथा सामाजिक क्रान्ति करना भी था जिसमें आर्य समाज आंशिक रूप से सफल हुआ है। चार वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद सभी सत्य विद्याओं के ग्रन्थ हैं। यह वेद सृष्टि के आरम्भ में सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सृष्टिकर्ता, सर्वान्तर्यामी परमेश्वर से अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न प्रथम चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा को उनके अन्तःकरण में सर्वव्यापक व सर्वान्तर्यामी ईश्वर की प्रेरणा द्वारा प्राप्त हुए थे। आजकल गुरू अपने शिष्यों को ज्ञान देता है और पहले से भी यही परम्परा चल रही है। वह बोल कर, व्याख्यान व उपदेश द्वारा ज्ञान देते हैं। ज्ञान प्राप्ति का दूसरा तरीका पुस्तकों का अध्ययन है। सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने ऋषियों वा मनुष्यों को ज्ञान देना था। ईश्वर अन्तरर्यामी है अर्थात् वह हमारी आत्माओं के भीतर भी सदा-सर्वदा उपस्थित रहता है। अतः वह अपना ज्ञान आत्मा के भीतर प्ररेणा द्वारा प्रदान करता है। यह ऐसा ही है जैसे गुरू का अपने शिष्य को बोलकर उपदेश करना। गुरू की आत्मा में जो विचार आता है वह उन विचारों को अपनी वाणी को प्रेरित करता है जिससे वह बोल उठती है। शिष्य के कर्ण उसका श्रवण करके उस वाणी को अपनी आत्मा तक पहुंचाते हैं। इस उदाहरण में गुरू का आत्मा और शिष्य की आत्मायें एक दूसरे से पृथक व दूर हैं अतः उन्हें बोलना व सुनना पड़ता है। परन्तु ईश्वर हमारे बाहर भी है और भीतर भी है। अतः उसे हमें कुछ बताने के लिए बोलने की आवश्यकता नहीं है। वह जीवात्मा के अन्तःकरण में प्रेरणा द्वारा अपनी बात हमें कह देता है और हमें उसकी पूरी यथार्थ अनुभूति हो जाती है। इसी प्रकार से ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों को ज्ञान दिया था।

 वर्तमान सृष्टि में वेदोत्पत्ति की घटना को 1,96,08,53,114 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। इस लम्बी अवधि में वेद की भाषा संस्कृत से अनेकों भाषाओं की उत्पत्ति हो चुकी है। वर्तमान में संस्कृत का प्रचार न होने से यह भाषा कुछ लोगों तक सीमित हो गई। इसके विकारों से बनी भाषायें हिन्दी व अंग्रेजी व कुछ अन्य भाषायें हमारे देश व समाज में प्रचलित हैं। संस्कृत का अध्ययन कर वेदों के अर्थों को जाना जा सकता है। दूसरा उपाय महर्षि दयानन्द एवं उनके अनुयायी आर्य विद्वानों के हिन्दी व अंग्रेजी भाषा में वेद भाष्यों का अध्ययन कर भी वेदों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। ईश्वर से वेदों की उत्पत्ति होने, संसार की प्राचीनतम पुस्तक होने, सब सत्य विद्याओं से युक्त होने, इनमें ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति के सत्य स्वरूप का यथार्थ वर्णन होने आदि कारणों से वेद आज व हर समय प्रासंगिक है। इस कारण वेदों का अध्ययन व अध्यापन सभी जागरूक, बुद्धिमान व विवेकी लोगों को करना परमावश्यक है अन्यथा वह इससे होने वाले लाभों से वंचित रहेंगे। वेदों से दूर जाने अर्थात् वेद ज्ञान का अध्ययन व अध्यापन बन्द होने के कारण संसार में अज्ञान व अन्धविश्वास उत्पन्न हुए जिससे हमारे देश व मनुष्यों का पतन हुआ और हम गुलामी व अनेक दुःखों से ग्रसित हुए। महर्षि दयानन्द ने संसार में सत्य ज्ञान वेदों का प्रकाश करने और प्राणी मात्र के हित के लिए वेदों का प्रचार व प्रसार किया और वेदों का पढ़ना-पढ़ाना व सुनना-सुनाना सभी मनुष्यों जिन्हें उन्होंनंे आर्य नाम से सम्बोधित किया, उनका परम धर्म घोषित किया।

 अब विचार करना है कि वेदों का ज्ञान किस प्रकार से प्राप्त किया जाये। इसका उत्तर है कि जिज्ञासु या विद्यार्थी को वेदों के ज्ञानी गुरू की शरण में जाना होगा। वह बालक को अपने साथ तब तक रखेगा जब तक की शिष्य वेदादि शास्त्रों की शिक्षा पूरी न कर ले। हम जानते हैं कि जब बच्चा जन्म लेता है तो उस समय वह अध्ययन करने के लिए उपयुक्त नहीं होता। लगभग 5 वर्ष की आयु व उसके कुछ समय बाद तक वह माता-पिता से पृथक रहकर ज्ञान प्राप्त करने के लिए योग्य होता है। ऐसे बालकों को उनके माता-पिता किसी निकटवर्ती गुरू के आश्रम में ले जाकर उस गुरू द्वारा बच्चों का प्रारम्भिक अध्ययन से आरम्भ कर सांगोपांग वेदों का अध्ययन करा सकते हैं। उस स्थान पर जहां बालक-बालिकाओं को वेदों का अध्ययन व अध्यापन कराया जाता है **“गुरूकुल”** कहा जाता हैं। यह गुरूकुल कहां हों, इनका स्वरूप व अध्ययन के विषय आदि क्या हों इस पर विचार करते हैं। अध्ययन करने का स्थान माता-पिता व पारिवारिक जनों से दूर होना चाहिये जहां शिष्य अपने गुरू के सान्निध्य में रह कर निर्विघ्न अपनी शारीरिक व बौद्धिक उन्नति करने के साथ अपने श्रम व तप के द्वारा गुरू की सेवा कर सके। अध्ययन करने का स्थान वा शिक्षा का केन्द्र गुरूकुल किसी शान्त वातावरण में जहां वन, पर्वत व नदी अथवा सरोवर आदि हों, होना चाहियेे। गुरू, शिष्यों व भृत्यों के आवास के लिये कुटियायें आदि उपलब्ध हों। एक गोशाला हों जिसमें गुरूकुल वासियों की आवश्यकता के अनुसार दुग्ध उपलब्ध हो। यदि अन्न आदि पदार्थों की भी व्यवस्था हों, तो अच्छा है अन्यथा फिर भिक्षा हेतु निकट के ग्राम व नगरों में जाना होगा। वर्तमान परिस्थिति के अनुसार भोजन वस्त्र आदि की भी सुव्यवस्था होनी चाहिये और पुस्तकें व अन्य आवश्यक सामग्री भी उपलब्ध होनी चाहिये। यह सब सुव्यवस्था होने पर गुरूजी को पढ़ाना है व बच्चों को पढ़ना है। वेदों का ज्ञान शब्दमय होने से शब्द का ज्ञान शिष्य को गुरू से करना होता है। वेदों के शब्द रूढ़ नहीं हैं। वह सभी धातुज या यौगिक हैं। अतः घातु एवं यौगिक शब्दों के ज्ञान में सहायक पुस्तक व ग्रन्थों का होना आवश्यक है। सम्भवतः यह ग्रन्थ वर्णमाला, अष्टाध्यायी, धातु पाठ, महाभाष्य, निधण्टु व निरूक्त आदि ग्रन्थ होते हैं। गुरूजी को क्रमशः इनका व वेदार्थ में सहायक अन्य व्याकरण ग्रन्थों व शब्द कोषों का ज्ञान कराना है। गुरूकुल में अध्ययन पर कुछ आगे विचार करते हैं। हम जानते हैं कि हम वर्तमान में रहते हैं। बीता हुआ समय भूतकाल और आने वाला भविष्य काल कहलाता है। जब हम भाषा का प्रयोग करते हैं तो क्रिया पद को यथावश्यकता भूत, वर्तमान व भविष्य का ध्यान करते हुए तदानुसार संज्ञा, सर्वनाम आदि का प्रयोग करते हैं। यह व्याकरण शास्त्र के अन्तर्गत आते हैं। अतः गुरूकुल में गुरूजी को शिष्य को पहले वर्णमाला व व्याकरण शास्त्र का ज्ञान कराना होता है। व्याकरण शास्त्र का ज्ञान हो जाने के बाद गुरूजी से प्रकीर्ण विषयों को जानकर वेद के ज्ञान में सहायक इतर अंग व उपांग ग्रन्थों का अध्ययन करते हैं और उसके बाद वेदों का अध्ययन करने पर विद्या पूरी हो जाती है। विद्या पूरी होने पर शिष्य स्नातक हो जाता है। अब वह घर पर रहकर स्वाध्याय आदि करते हुए कृषि, चिकित्सा, ग्रन्थ लेखन, आचार्य व उपदेशक, पुरोहित, सैनिक, राजकर्मी, वैज्ञानिक, उद्योगकर्मी आदि विभिन्न रूपों में सेवा करके अपना जीवनयापन कर सकता है। वेद, वैदिक साहित्य एवं वेद व्याकरण का अध्ययन करने के बाद स्नातक अनेक भाषाओं को सीखकर तथा आधुनिक विज्ञान व गणित आदि विषयों का अध्ययन कर जीवन का प्रत्येक कार्य करने में समर्थ हो सकता है। यह कार्य उसको करने भी चाहिये। हम ऐसे लोगों को जानते हैं जिन्होंने गुरूकुल में अध्ययन किया और बाद में वह आईपीएस, आईएएस आदि भी बने। विश्वविद्यालय के कुलपति, कुलसचित, संस्कृत अकादमियों के निदेशक, सफल उद्योगपति आदि बने, अनेक सांसद भी बने। स्वामी रामदेव और आचार्य बालकृष्ण भी आर्य गुरूकुलों की देन हैं। अतः वेदों का अध्ययन कर भी जीवन में सर्वांगीण उन्नति हो सकती है, यह अनेक प्रमाणों से सिद्ध है। यह उन लोगों के लिए अच्छा उदाहरण हो सकता है जो अपने बच्चों को धनोपार्जन कराने की दृष्टि से महंगी पाश्चात्य मूल्य प्रधान शिक्षा दिलाते हैं और बाद में आधुनिक शिक्षा में दीक्षित सन्तानें अपने माता-पिता आदि परिवारजनों की उपेक्षा व कर्तव्यहीता करते दिखाई देते हैं।

 प्राचीनकाल में गुरूकुल वैदिक शिक्षा के केन्द्र हुआ करते थे जो महाभारत काल के बाद व्यवस्था के अभाव में धीरे धीरे निष्क्रिय हो कर समाप्त हो गये। स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में गुरूकुलीय शिक्षा पर विस्तार से प्रकाश डाला है। उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में स्कूलों में शिक्षा दी जाती थी। इसका उद्देश्य शासक वर्ग अंग्रेजों का भारत के बच्चों को अंग्रेजी के संस्कार देकर उन्हें गुप्त और लुप्त रूप से वैदिक संस्कारों से दूर करना और उन्हें अंग्रेजियत और ईसाईयत के संस्कारों व परम्पराओं के निकट लाना था। स्वामी दयानन्द ने अंग्रेजों की इस गुप्त योजना को समझा था और इसके विकल्प के रूप में गुरूकुलीय शिक्षा प्रणाली का अपने ग्रन्थों में विधान किया जिससे अंग्रेजी शिक्षा के खतरों का मुकाबला किया जा सके। स्वामी श्रद्धानन्द महर्षि दयानन्द सरस्वती के योग्यतम् अनुयायी थे। उन्होंने गुरूकुलीय शिक्षा के महत्व को समझा था और अपना जीवन अपने गुरू की भावना के अनुसार हरिद्वार के निकट एक ग्राम कांगड़ी में सन् 1902 में गुरूकुल की स्थापना में समर्पित किया और उसको सुचारू व सुव्यवस्थित संचालित करके दुनियां में एक उदाहरण प्रस्तुत किया। स्वामी श्रद्धानन्द का यह कार्य अपने युग का एक क्रान्तिकारी कदम था। उनके द्वारा स्थापित गुरूकुल ने आज एक विश्वविद्यालय का रूप ले लिया है। आज समय के साथ देशवासियों व आर्य समाजियों का भी वेदों के प्रति वह अनन्य प्रेमभाव दृष्टिगोचर नहीं होता जो हमें महर्षि दयानन्द के साहित्य को पढ़ कर प्राप्त होता है। यहां वेद भी अन्य भाषाओं व उनके साहित्य की ही तरह एक विषय बन कर रह गये हैं और प्रायः अपना महत्व खो बैठे हैं। इसका एक कारण समाज की अंग्रेजीयत तथा आत्मगौरव, स्वधर्म व स्वसंस्कृति के अभाव की मनोदशा है। संस्कृत व वेदों का अध्ययन करने से उतनी अर्थ प्राप्ति नहीं हो पाती जितनी की अन्य विषयों को पढ़ कर होती है। नित्य प्रति ऐसे अनेक लोग सम्पर्क में आते हैं जो संस्कृत पढ़े है और पढ़ा भी रहे हैं परन्तु उनका पारिवारिक व समाजिक जीवन सन्तोषजनक नहीं है। ऐसे लोगों को देखकर लोगों में संस्कृत के प्रति उत्साह में कमी का होना स्वाभाविक है।

हमारे आर्य समाज के विद्वानों व नेताओं को इस समस्या पर गम्भीरता से विचार करना चाहिये। सरकार व निजी प्रतिष्ठानों में आज हिन्दी, अंग्रेजी व क्षेत्रीय भाषाओं का महत्व है जहां संस्कृत प्रायः गौण, उपेक्षित व महत्वहीन है। वर्तमान में संस्कृत केवल धर्म संबंधी कर्मकाण्ड की भाषा बन कर रह गई है। समाज में इस मनोदशा को बदलकर संस्कृत के व्यापक उपयोग के मार्ग तलाशने होंगे। हमें लगता है कि संस्कृत पढ़े हमारे स्नताकों को हिन्दी व अंगेजी भाषा सहित आधुनिक ज्ञान, विज्ञान तथा गणित आदि विषयों का अध्ययन भी करना चाहिये जिससे वह सरकारी सेवा व अन्य व्यवसायों में अन्य अभ्यर्थियों के समान स्थान प्राप्त कर सकें जो सम्प्रति प्राप्त नहीं हो पा रहे हैं। संस्कृत के भविष्य से जुड़े एक प्रसंग का उल्लेख करना भी यहां उचित होगा। कुछ सप्ताह पूर्व वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून में पाणिनी कन्या महाविद्यालय, वाराणसी की विदुषी आचार्या डा. नन्दिता शास्त्री ने कहा कि संस्कृत भाषियों की संख्या दिन प्रति घट रही है। विगत जनगणना में यह 15-20 हजार ही थी। यदि यह 10 हजार या इससे कम हो जाती है तो सरकार के द्वारा संस्कृत को मिलने वाली सभी सुविधायें व संरक्षण बन्द हो जायेंगे और यह दिन संस्कृत प्रेमियों के लिए अत्यन्त दुखद होगा। स्वामी श्रद्धानन्द के बाद स्वामी दयानन्द के अनुयायियों ने स्वामी श्रद्धानन्द का अनुकरण कर अनेक गुरूकुल खोले जिनकी संख्या वर्तमान में 500 से अधिक है। यदि यह सभी गुरूकुल सुव्यवस्थित रूप से चलायें जा सकें तो यह वैदिक धर्म की रक्षा और उसके प्रचार प्रसार का सबसे बड़ा साधन सिद्ध हो सकते हैं और भविष्य में भी होंगे। वेद, वैदिक साहित्य, धर्म, संस्कृत और संस्कृति की रक्षा व देश के भावी स्वरूप की दृष्टि से में इन गुरूकुलों की भूमिका महत्वपूर्ण हैं। इसका उन्नयन करना आर्य समाज का तो कार्य है ही साथ ही सरकार में वेदों को मानने वाले लोगों को वेदों की रक्षा व प्रचार के लिए प्रभावशाली योजनायें एवं कार्य करने चाहियें। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो ‘धर्मो एव हतो हन्ति’ की भांति धर्म रक्षा में प्रमाद करने से यह धर्म हमे ही मार देगा।

 स्वामी श्रद्धानन्द आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता थे। वह आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब तथा सार्वदेशिक सभा के भी प्रधान रहे। शुद्धि आन्दोलन के भी वह प्रमुख सूत्रधार रहे और सम्भवतः यही उनकी शहादत का कारण बना। स्वामी जी का देश की आजादी के आन्दोलन में भी महत्वपूर्ण योगदान था। समाज सुधार के क्षेत्र में उनकी उपलब्धियां अनेकों हैं। हम उनके जीवन को वेदों का मूर्त रूप देखते हैं जिसमें कहीं कोई कमी हमें दिखाई नहीं देती। काश कि महर्षि दयानन्द अधिक समय तक जीवित रहते तो श्रद्धानन्द उनके सर्वप्रिय शिष्य होते। आर्य समाज व महर्षि दयानन्द की भक्ति के लिए उन्होंने घर फूँक तमाशा देखा। उनका व्यक्तित्व आदर्श पिता, आदर्श पुत्र, आदर्श पति, आदर्श समाज सुधारक, आदर्श नेता, आदर्श स्वतन्त्रता सेनानी, पत्रकार, साहित्यकार, लेखक, विद्वान, शिक्षा शास्त्री, धर्म गुरू, वेदभक्त, वेद सेवक, वेद पुत्र, ईश्वर पुत्र व ईश्वर के सन्देशवाहक का था। 23 दिसम्बर, 1926 को वह एक षडयन्त्र का शिकार होकर एक कातिल अब्दुल रसीद द्वारा शहीद कर दिये गये। हम समझते हैं कि उन्होंने अपने रक्त की साक्षी देकर वैदिक सिद्धान्तों व मान्यताओं की साक्षी दी है। हम उन्हें अपनी श्रद्धाजंलि प्रस्तुत करते हैं। जब तक सृष्टि पर मनुष्यादि प्राणी विद्यमान हैं, विवेकी देशवासी स्वामी श्रद्धानन्द जी के यश, कीर्ति, उनके कार्य और बलिदान को स्मरण कर उनसे प्रेरणा लेते रहेंगे।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

 **देहरादून-248001**

**फोनः 09412985121**